अनन्तर/जनसत्ता/23 सितंबर, 2007

एक उदासीन संप्रदाय

ओम थानवी

पहली जुलाई, 1959 की सुबह केपी भानुमती दिल्ली के अशोक होटल में चे गेवारा से मिलीं। शाम को उन्हें ऑल इंडिया रेडियो के 'न्यूजरील' कार्यक्रम में चे का इंटरव्यू प्रसारित करना था। उन्होंने सबसे पहले भारत आने का सबब पूछा।

चे ने कहाः ''क्यूबा में बातीस्ता राज से आजादी के बाद मैं विएतनाम और दूसरे देशों की प्रत्यक्ष जानकारी हासिल करने के लिए निकला हूं, जिनका औपनिवेशिक शासन में दमन हुआ। भारत आपके प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू के बुलावे पर आया हूं। मैं खुद चाहता था कि भारत में आजादी के बाद शुरू हुए विकास-कार्यों को नजदीक से देखूं। लातिनी अमेरिका में हमने भी साम्राज्यवाद को बहुत झेला है और हमें बहुत नीचे से ऊपर उठना है।''

भानुमती ने पूछा- आप समाजवादी अर्थव्यवस्था और समाजवादी मनुष्य की बात करते हैं। इसे कुछ स्पष्ट करेंगे? इस पर गेवारा बोलेः ''हम अल्प-विकसित देशों को साम्राज्यवादी पराधीनता, कठपुतली हुकूमतों और शोषण के कुचक्र से बरी होना है। हम उपनिवेश या पर-निर्भर मुल्क रहे हैं, जहां कम विकास हुआ है या बेतरतीब विकास। भूख स्वाधीनता के संघर्ष के लिए श्रेष्ठ परिस्थितियां पैदा करती हैं। बाहरी ताकत के गुलाम हुए बगैर भी आप समाजवादी मानस और समाजवादी अर्थव्यवस्था अर्जित कर सकते हैं। ऐसा न हो सका तो कोई अल्पविकसित देश कभी भ्रष्टाचार से मुक्त व्यवस्था नहीं देख पाएगा।''

चे ने इस बातचीत में भारत का खास जिक्र कियाः ''भारत ने लंबे संघर्ष के बाद आजादी हासिल की है। नेहरू के प्रति मेरे मन में बहुत आदर है। वे देश में आर्थिक आत्मनिर्भरता लाएंगे और भारत एक ताकतवर मुल्क साबित होगा।'' उन्होंने आगे कहा, ''हमें ऐसा समाज तैयार करना होगा जिसमें सभी लोग वैयक्तिक मानवीय आकांक्षाओं की सामूहिक चेतना का साझा करें। नव-उपनिवेशवाद दक्षिणी अमेरिका से शुरू हुआ और फिर अफ्रीका व एशिया में उसने जड़ें जमाईं। जरा देखिए, विएतनाम और कोरिया में क्या हो रहा है। एशिया के कुछ मुल्कों में नृशंसता भयावह रूप में है। साम्राज्यवादियों की साजिश पर काबू पाने के लिए हम अल्पविकसित यानी तीसरी दुनिया के देशों को एकजुट होना पड़ेगा।''

विचारधारा की बात करते हुए भानुमती ने एक सवाल यह भी पूछा कि आप कम्युनिस्ट माने जाते हैं, मगर कम्युनिस्ट (साम्यवादी) मताग्रह एक बहु-धर्मी समाज में कैसे स्वीकार किए जा सकते हैं?

इस पर चे का जवाब यह थाः ''मैं अपने को कम्युनिस्ट नहीं कहूंगा। मैं एक कैथलिक होकर जन्मा; एक सोशलिस्ट (समाजवादी) हूं और बराबरी में और शोषक देशों से मुक्ति में भरोसा रखता हूं। मैंने लड़कपन के दिनों से भूख को देखा है, कष्ट, भयंकर गरीबी, बीमारी और बेरोजगारी को भी। क्यूबा, विएतनाम और अफ्रीका में ये हालात रहे हैं; आजादी की लड़ाई लोगों की भूख से जन्म लेती है। मार्क्स-लेनिन के सिद्धांतों में उपयोगी पाठ (संदेश) हैं। जमीनी क्रांतिकारी मार्क्स के दिशा-निर्देशों को मानते हुए अपने संघर्ष का रास्ता खुद बनाते हैं। भारत में गांधीजी के सिद्धांतों की अपनी वकत है, जिन (सिद्धांतों) की बदौलत आजादी हासिल हुई।''

क्या गांधी-नेहरू के प्रति चे का प्रशंसा और आदर का भाव शिष्टाचार के नाते था? या यह कूटनीति थी?

मुझे लगता है, भारत में चे ने खुले नजरिए से एक अजनबी- मगर जानदार और आकर्षक- विचार को समझने की कोशिश की। गांधीजी का जिक्र वे छोड़ सकते थे, जिनके बारे में उनसे पूछा नहीं गया था। वे ''सत्याग्रह'' और ''शांतिपूर्ण'' तौर-तरीकों पर टीका कर सकते थे। लेकिन उन्होंने हवाना लौटकर जो रिपोर्ट पेश की, उसमें भी साफ लिखा कि महात्मा गांधी के सत्याग्रह से भारत ने आजादी हासिल की और जन-असंतोष के शांतिपूर्ण प्रदर्शनों ने अंग्रेजों को मुल्क छोड़ने के लिए बाध्य किया।

चे के उस नजरिए का संकेत उनके कलकत्ता के प्रवास में भी देखा जा सकता है। वे किन्हीं 'कृष्ण' का जिक्र करते हैं, जिन्होंने महाविनाश के शस्त्रों के मामले में उनकी आंखें खोलीं। अपनी रिपोर्ट में चे लिखते हैंः ''वहीं (कलकत्ते में) कृष्ण नाम के एक विद्वान से मुलाकात का मौका मिला। वह एक ऐसा चेहरा था, जो हमारी आज की दुनिया से दूर लगता था। उस निष्कपटता और विनयशीलता के साथ उन्होंने हमसे लंबी बात की, जिसके लिए यह मुल्क जाना जाता है। उन्होंने दुनिया की समूची तकनीकी शक्ति और सामर्थ्य को आणविक ऊर्जा के शांतिप्रिय उपयोग में लगाने की जरूरत पर जोर देते हुए अंतरराष्ट्रीय बहसों की उस राजनीति की भरपूर निंदा की, जो आणविक हथियारों की जखीरेबाजी को समर्पित है।''

इस संवाद के प्रभाव के वशीभूत चे ने आगे लिखा, ''भारत में युद्ध नामक शब्द वहां के जन-मानस की आत्मा से इतना दूर है कि वह स्वतंत्रता आंदोलन के तनावपूर्ण दौर में भी उसके मन पर नहीं छाया।''

कलकत्ता के उस मनीषी का जिक्र चे गेवारा ने दो महीने बाद हवाना में फिर किया। 8 सितंबर को सफर से लौटने के ठीक एक घंटे बाद, पत्रकारों से बातचीत करते हुए।

अमेरिका में एक बेहतर कायदा यह है कि तीस साल बाद गोपनीय दस्तावेज सार्वजनिक कर दिए जाते हैं। नाम-स्रोत काली स्याही से ढक कर। पुराने हवाना में एक कबाड़-से बाजार में मुझे ऐसा पुलिंदा पुस्तिका की शक्ल में मिला जिसमें चे गेवारा को लेकर अमेरिकी खुफिया एजेंसियों की क्यूबा से भेजी गई सूचनाएं मूल (अमेरिकी फाइल की फोटोप्रति) रूप में संकलित थीं। पुस्तिका दस वर्ष पहले आस्ट्रेलिया में छपी। देखकर आश्चर्य होता है कि उसमें पहला दस्तावेज 1952 का है, जब चे की फिदेल कास्त्रो से मुलाकात तक नहीं हुई थी! उसके बाद उन पर लगातार नजर रखी गई। उस अमेरिकी खुफिया रिपोर्ट से ही पता चला कि भारत के बाद चे पूर्वी पाकिस्तान (अब बांग्लादेश) भी गए थे, जहां विशेषज्ञों के आने-जाने पर एक करार हुआ।

पुस्तिका में चे की हवाना वाली पत्रकार वार्ता का विवरण है। मोर्स पद्धति से अगले रोज अमेरिका भेजी गई दो पेज की रिपोर्ट- जो भाषा और शैली में किसी पत्रकार की खबर जैसी लगती है- में बताया गया है कि कैसे चे ने यूरोप, मध्यपूर्व, एशिया और अफ्रीका की अपनी तीन महीने की यात्रा के अनुभवों का खुलासा किया। भारत के दौरे पर उनका कथन इस तरह उद्धृत हैः

''क्यूबा के लोगों के प्रति भारत के लोग सहृदय थे। हमने पाया कि वे खेती लायक छोटी-छोटी जमीनों और बड़ी जमींदारियों से पैदा हुई समस्याओं को हल करने का प्रयास कर रहे हैं।... एक भारतीय विद्वान कृष्ण से बातचीत करते हुए हमें महाविनाश के साधनों की बुराइयों का बोध हुआ। हिरोशिमा पहुंचने पर उस भयानक सच्चाई को जब हमने अपनी आंख से देखा तो बड़ी ग्लानि का अहसास हुआ कि कैसे उस वक्त हम लोगों ने खुशी का इजहार किया था, जब लोकतांत्रिक ताकतों ने द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान वहां अणु बम गिराया।''

कोई बता सकता है कृष्ण नामक वे मनीषी कौन थे, जिनसे कलकत्ता में चे गेवारा को ज्ञान मिला? मुझे इस बाबत कहीं से पुख्ता जानकारी नहीं मिली। बहुत-से लोगों का खयाल था कि ''आज की दुनिया से दूर के चेहरे'' वाले विद्वान शायद जिद्दू कृष्णमूर्ति रहे हों। पर इसकी संभावना नहीं लगती। मैंने बंगलूर कृष्णमूर्ति न्यास में बात की। वरिष्ठ लेखक और यायावर कृष्णनाथ इन दिनों वहीं हैं। वहां इसकी पुष्टि नहीं हुई। पुपुल जयकर की लिखी जीवनी के मुताबिक मई 1959 में कृष्णमूर्ति दिल्ली में थे और गर्मी से परेशान होकर तीन महीने के लिए कश्मीर चले गए थे।

हवाना में जब चे के भारत दौरे की रिपोर्ट हासिल की, स्पानी भाषा में थी। थोड़ा भाव पता चल जाता तो वहां कुछ और दरयाफ्त करने का यत्न करता!

जो हो, दूर-देश से आने वाली बहुत सारी हस्तियां भारत से कुछ बोध लेकर गई हैं। चे के स्वीकार में शायद उसी सिलसिले की अनुगूंज है। लेकिन इस मामले में हमें उससे ज्यादा नहीं मालूम जो चे ने खुद लिखा। दुर्भाग्य से देश में मार्क्सवादी समुदाय को भी चे की भारत यात्रा की स्मृति नहीं है। कलकत्ता में भी नहीं। इसकी एक वजह शायद यह हो कि उस वक्त अखबारों में क्यूबा के प्रतिनिधिमंडल के दौरे की छिटपुट खबरें ही छपीं। दिल्ली में 'हिंदुस्तान टाइम्स' में जरूर एस. मुलगांवकर ने चे की यात्रा को महत्त्व दिया। उन्होंने दो रोज लगातार पहले पेज पर तस्वीरें छापीं- एक रोज नेहरू के साथ, फिर वीके कृष्ण मेनन के साथ। लेकिन खबरों में औपचारिक बैठक-वार्ताओं का ब्योरा ज्यादा रहा। बस एक शाम एक घंटे के लिए चे के कॉटेज एम्पोरियम जाने का जिक्र एक खबर के बीच में कहीं है।

कलकत्ता के अखबारों में सिर्फ 'हिंदुस्तान स्टैंडर्ड' में एक रोज (12 जुलाई को) खबर नहीं, पर चे की तस्वीर छपीः कलकत्ता के अगरपाड़ा के पटसन कारखाने में ''सदाशय दौरे'' (गुडविल मिशन) पर क्यूबा से आए ''अर्नेस्तो गेवाने'' (अखबार में प्रूफ की भूल)। पांचवें पृष्ठ पर, कारखाने के दौरे के दो दिन बाद।

उन दिनों भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी (तब पार्टी एक थी) का बांग्ला दैनिक 'स्वाधीनता' वहां से निकलता था। लगा उसमें चे के कलकत्ता दौरे का भरपूर ब्योरा होगा। मेरे आग्रह पर एक वरिष्ठ प्रतिबद्ध लेखक ने जुलाई 1959 के अंकों के साथ 'स्वाधीनता' के आगे-पीछे के अंक देख डाले। पार्टी के अखबार ने क्यूबा की क्रांति की खबरें भले बढ़-चढ़ कर छापी हों, गेवारा की यात्रा उसने पूरी तरह गोल कर दी। जबकि चे की यात्रा को पार्टी का अखबार तो बढ़-चढ़ कर प्रचारित कर सकता था। यह बेरुखी क्यों रही, कोई नहीं जानता। वह छुपी यात्रा नहीं थी; दूसरे अखबार में छपी तस्वीर से यह आप जाहिर है।

यह जरूर है कि चे कभी कम्युनिस्ट पार्टी से सीधे नहीं जुड़े। वे रूसी साम्यवाद के आलोचक थे। उसे उन्होंने 'रूसी उपनिवेशवाद' की संज्ञा दी थी। उन्हें इस पर एतराज था कि कोई साम्यवादी देश तीसरी दुनिया के अविकसित देशों से हथियारों और बाकी सहयोग के लिए 'मुनाफा' कैसे कमा सकता है। बाद में चे ने माओ की नीतियों की बहुत तारीफ की। यह कहते हुए कि क्यूबा को अपना साम्यवाद खुद तलाशना होगा। 1965 में अल्जीरिया में एक खुली सभा में चे ने रूसी साम्यवाद की आलोचना की। क्यूबा लौटने पर उन्हें इसकी कीमत चुकानी पड़ी।

मगर भारत में पांच लोगों का प्रतिनिधिमंडल चे के नेतृत्व में क्यूबा की क्रांति का दूत बनकर आया था। क्या यहां पार्टी का कोई नेता उनसे नहीं मिला? क्यूबा की क्रांति के बाद उसके किसी नायक के पहली बार भारत आने पर कोई स्वागत या अभिनंदन हुआ? पार्टी के अखबार में ही नहीं, चे की अपनी रिपोर्ट में भारत के दस दिन के प्रवास के दौरान किसी साम्यवादी नेता से मुलाकात का हवाला नहीं है। क्या पार्टी को उनसे दूर रहने का इशारा था? उस बेरुखी का ही नतीजा है कि चे की भारत यात्रा कोई पचास साल जनमानस की स्मृति से पूरी तरह गायब रही। आगे जाकर भारत में उन्हें नवाजने वाले साम्यवादियों में भी।

मुझे आज भी चे गेवारा के मामले में देश के साम्यवादी दलों का रवैया कम पेचीदा नहीं लगता। अगले पखवाड़े - 9 अक्तूबर को - चे की शहादत के चालीस साल पूरे हो जाएंगे। दुनिया भर से आए दिन तरह-तरह के आयोजनों की खबरें आती हैं। इस सच्चाई के बावजूद कि क्रांति के बाद चे की जिम्मेवारी में उन बंदी सैनिकों के साथ नाइंसाफी हुई, जिन पर विद्रोहियों पर जुल्म ढाने के आरोप थे। उन्हें बगैर वाजिब सुनवाई के मौत की सजा दी गई। कुछ कथित 'गद्दारों' पर चे ने खुद गोली दागी। उनके चरित्र में यह अंधेरा पहलू रहा।

लेकिन चे की शख्सियत में संघर्ष की दास्तान भी बहुत लंबी है। एक मानवीय चेहरे के साथ। सत्ता धारण कर भले कुछ बदल गए। पर सियरा-माएस्त्रा की पहाड़ियों में, फिदेल के विमत के बावजूद, वे घायल दुश्मन को इलाज के लिए उठा लाते थे। एक दफा फिदेल ने कहा, इसे हमने घायल किया था, ठीक होकर यह हमीं पर बंदूक तानेगा। चे का जवाब था- तब देखेंगे। लड़ाई में जो कमजोर होगा, मारा जाएगा। सब जानते हैं मकसद के साथ चे ने घर छोड़ा, डॉक्टरी का पेशा छोड़ा, देश छोड़ा, सत्ता छोड़ी और दूसरों के लिए लड़ते हुए अंततः दुनिया भी। ज्यां पॉल सार्त्र ने चे से मिलने के बाद उन्हें ''हमारे दौर का सबसे पूर्ण मनुष्य'' कहा था।

उस क्रांतिकारी की याद में देश के साम्यवादी क्या कर रहे हैं?

क्या आपको नहीं लगता, वे अपनी पचास साल पुरानी उसी उदासीनता को दुहरा रहे हैं?

और अंत में: हवाना से लौटते वक्त लंदन में 'गार्डियन' अखबार के दफ्तर में एक प्रदर्शनी देखने गया। वहां भारत के सिद्ध कार्टूनिस्ट मरहूम अबू अब्राहम के उन व्यंग्यचित्रों का संग्रह प्रदर्शित था, जो उन्होंने लंदन में 'ऑब्जर्वर' के लिए काम करते हुए बनाए। बाद में अबू 'इंडियन एक्सप्रेस' में दिल्ली आ गए थे।

लंदन की प्रदर्शनी में एक रेखाचित्र चे गेवारा का था। अबू 1962 में हवाना गए। चे तब क्यूबा के उद्योग मंत्री थे। उस चित्र पर चे के तीन अक्षर वाले दस्तखत हैं। यों भी वह एक बहुत उम्दा रेखांकन है।

कैप्शन

दिल्ली में 2 जुलाई, 1959 को रक्षा मंत्री वीके कृष्ण मेनन के साथ चे गेवारा। अगले रोज 'हिंदुस्तान टाइम्स' में छपी तस्वीर।

दिल्ली में चे की भारत यात्रा की एक खबर। उनके कलकत्ता प्रवास की साम्यवादी दैनिक तक ने उपेक्षा की। संभवतः तब पार्टी की ऐसी नीति रही हो।

चे का चेहरा (बॉक्स)

वह तस्वीर चे ने खुद कभी नहीं देखी। उस तस्वीर से उसके छविकार ने कभी एक पैसा नहीं कमाया। मगर दुनिया के हर कोने में आज वह छवि मौजूद है। विद्रोह और क्रांति के एक सशक्त प्रतीक के रूप में। 'टाइम' पत्रिका द्वारा चे गेवारा को पिछली सदी की सौ हस्तियों में शरीक करने से बहुत पहले वह छवि दुनिया में सबसे ज्यादा छपी तस्वीर घोषित हो गई थी।

क्यूबा के छायाकार एल्बर्तो कोरदा ने 5 मार्च, 1960 को हवाना के क्रांति चौक पर चे गेवारा की उस बेचैन मुद्रा को पकड़ा था। वह चे की सामान्य छवि नहीं थी। मगर उस रोज पूरा मुल्क गमगीन था। एक भारवाही जहाज में हुए विस्फोट में बहत्तर नागरिक मारे गए थे। फिदेल कास्त्रो ने हादसे को अमेरिका समर्थित गद्दारों की कार्रवाई करार दिया। क्रांति चौक पर शोक में एक सभा हुई। लाखों लोग उसमें शामिल हुए। उसमें सिमोन द बुआ और ज्यां पॉल सार्त्र भी मौजूद थे। वे चे के बुलावे पर कुछ रोज पहले क्यूबा आए थे।

चे सभा में थोड़ा देर से पहुंचे। मुख्य मंच के सामने बनी अस्थायी चौकी पर चुपचाप पीछे की तरफ खड़े हो गए। आगे भीड़ ज्यादा थी। चौकी पर कुछ जगह हुई। चे आगे आए। एक नजर लोगों के सैलाब पर डाली। फिर शायद बेगुनाह मृतकों का खयाल उभर आया। उनकी आंखों में लोगों ने रोष देखा।

उस वक्त कोरदा नीचे से चौकी पर खड़े सार्त्र की तस्वीर ले रहे थे। उन्होंने देखा, आधे जूम वाले कैमरे की आंख में चे का चेहरा है। बिखरे हुए लंबे बाल। सुनहरे तारे वाली काली टोपी। हरा जरकिन। हवा में खुनकी थी, सो जरकिन गले तक कस रखा था। कोरदा ने दो तस्वीरें लीं। चौड़ा फ्रेम। एक तरफ सुरक्षाकर्मी, दूसरी तरफ पेड़ की डाल। अगले ही क्षण चे वापस पीछे हो गए।

चे की वह छवि कहीं कोरदा की फाइलों में जमा हो गई। सात साल बाद अचानक इटली के एक प्रकाशक फेल्त्रीनेल्ली तस्वीर ले गए। पैसे के बारे में पूछने पर कोरदा ने जवाब दिया, कोमान्दांते (कमांडर) की छवि से मैं पैसा नहीं बनाता। इस बीच बोलीविया के जंगल में चे पकड़े गए। बाद में उन्हें मार दिया गया। फेल्त्रीनेल्ली ने चे की 'बोलीविया डायरी' के आवरण पर वह तस्वीर इस्तेमाल की- सलीके से चेहरे के इर्द-गिर्द की जगह छांट कर। किताब के लिए बना एक पोस्टर- जिस पर केवल छवि थी- किताब से ज्यादा लोकप्रिय हुआ।

मशहूर आयरिश कलाकार जिम फिट्जपेट्रिक ने उस पोस्टर के आधार पर एक काले-सफेद पोर्ट्रेट की रचना की। वह युवकों में लोकप्रिय हो गया। बाद में अमेरिकी चित्रकार एंडी वारहोल ने अपनी एक कृति में चे की वह छवि टांक दी।

कभी संयोग से खींची गई वह तस्वीर जाने कितने रूपों में ढली और पोस्टर-कलाकृतियों से होते हुए लोगों के पहनावे पर छा गई। आज सिगार, लाइटर, कैलेंडर, पेन और घड़ियों से लेकर टीशर्ट-टोपियों तक वह छवि हर कहीं नुमाया है- झारखंड से लेकर संयुक्त राज्य अमेरिका तक। विज्ञापनों में भी उस तस्वीर का नाजायज इस्तेमाल होता है।

विडंबना है कि जुझारू चे के चेहरे का आज बहुत बड़ा बाजार है। क्रांति का दूत रूमानी युवकों के लिए मानो फैशन का हरकारा है!

...ation in Northern, North-Western and Central India

NEW DELHI, THURSDAY, JULY 2, 1959

...N APPEAL BODIES

CUBAN GIFT FOR PM

'CONSPIRACY' AGAINST KERALA GOVT.

Reds Accuse Congress Of Double Standards

FROM OUR SPECIAL CORRESPONDENT

TRIVANDRUM, July 1

THE central secretariat of the Communist Party of India today accused the Congress leadership of double standards "unworthy of a party which is ruling at the Centre and 12 out of the 14 States."

RAO LIKELY TO VISIT DELHI

KERALA SITUATION GETTING GRAVER

Cuba Desires Diplomatic Relations

SOEKARNO ... STATE A...

Army Dem... Against ...